शैलेंद्र कुमार

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

28 नवंबर, 2001

[एम.बी. शाह, बी.एन. अग्रवाल एवं अरिजीत पसायत, न्यायमूर्तिगण]

आपराधिक विचारण:

हत्या के मामले का विचारण — यदि किसी वाद के विचारण के दौरान साक्षी उपस्थित रहने में असफल रहते हैं, तो विचारण न्यायाधीश का यह कर्तव्य है कि वह अन्वेषण अधिकारी को समन जारी करे।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 311 — इसके अंतर्गत शक्तियाँ — यह न्यायालय को यह अधिकार प्रदान करती है कि वह ऐसे महत्वपूर्ण साक्षियों को समन करे जिन्हें साक्षी के रूप में नहीं बुलाया गया था, तथा उनका परीक्षण करे अथवा उन्हें वापस बुलाए या पुनः परीक्षण करे, यदि उनका साक्ष्य वाद के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए आवश्यक प्रतीत हो — यह धारा अत्यंत व्यापक परिधि की है — न्यायालय किसी भी प्रक्रम पर साक्षियों का परीक्षण कर सकता है।

अपीलकर्ता की माता को कथित रूप से आरोपियों द्वारा, जो घातक हथियारों से लैस थे और विधिविरुद्ध जमाव बनाए हुए थे, मृत्यु के घाट उतारा गया था। आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गई। वाद को विचारण के लिए लिया गया तथा आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध भा.दं.सं. की धाराओं 148, 149, 323, 449 एवं 302 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए।

सत्र न्यायाधीश ने औपचारिक साक्षियों का परीक्षण करने के पश्चात इस आधार पर अभियोजन साक्ष्य बंद कर दिया कि अपर लोक अभियोजक ने अन्य साक्षियों के परीक्षण के लिए कोई प्रार्थना नहीं की थी। अभियोजन ने उक्त सत्र न्यायाधीश के न्यायालय से वाद स्थानांतरण हेतु आवेदन दाखिल किया, जो सेवानिवृत्त हो चुके थे, और वाद एक अन्य सत्र

न्यायाधीश के न्यायालय में स्थानांतरित कर दिया गया, जिन्होंने पूर्व आदेश को वापस लेते हुए अपर लोक अभियोजक को सुनवाई की अगली तारीख पर साक्षियों को उपस्थित कराने का निर्देश दिया। आरोपियों ने पुनरीक्षण याचिका दाखिल कर इसे चुनौती दी। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर उसे स्वीकार कर लिया कि आपराधिक न्यायालय अपने पूर्व आदेश को वापस नहीं ले सकता।

राज्य ने साक्षियों के परीक्षण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के अंतर्गत एक आवेदन दाखिल किया। अपर सत्र न्यायाधीश ने उसे अस्वीकार कर दिया। तथापि, सुनवाई के समय अपर लोक अभियोजक अनुपस्थित रहे। अपीलकर्ता-सूचक ने आपराधिक विविध याचिका दाखिल की, जिसे उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया।

इस अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त आदेश को चुनौती दी गई। थाने के भारसाधक अधिकारी ने प्रस्तुत किया कि उन्हें किसी भी न्यायालय अथवा अपर लोक अभियोजक सहित किसी अन्य अभिकरण द्वारा कभी भी सूचना या समन की तामील नहीं की गई, जिससे कि वे साक्षी को विचारण न्यायालय तक उपस्थित करा सकें।

अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. हत्या के विचारण में यह घृणित और विकर्षणकारी बात है कि थाने के भारसाधक अधिकारी को सूचित किए बिना, न्यायालय द्वारा और अपर लोक अभियोजक द्वारा कार्यवाहियाँ आगे बढ़ाई गईं और इस प्रकार उसे निपटाने का प्रयास किया गया, मानो अभियोजन ने कोई साक्ष्य ही नहीं दिया हो। ऐसा प्रतीत होता है कि आरोपी अनुचित साधनों द्वारा अभियोजन को विफल करना चाहता है और अपर सत्र न्यायाधीश के साथ-साथ अपर लोक अभियोजक ने भी अपने कर्तव्यों के निर्वहन में कोई रुचि नहीं दिखाई। यदि अन्वेषण अधिकारी वाद के विचारण के समय उपस्थित रहने में असफल रहता है, तो सत्र न्यायाधीश का यह कर्तव्य था कि वह उसे समन जारी करता। यह भली-भाँति समझ लिया जाना चाहिए कि ऐसे तरीकों से अभियोजन को विफल नहीं किया जा सकता और अपराध के पीड़ित को असहाय अवस्था में नहीं छोड़ा जा सकता। [374-ग-घ; 375-क-ख]

1.2. दं.प्र.सं. की धारा 311 न्यायालय को यह अधिकार प्रदान करती है कि वह ऐसे महत्वपूर्ण साक्षियों को समन करे जिन्हें साक्षी के रूप में नहीं बुलाया गया था, तथा उनका परीक्षण करे अथवा उन्हें वापस बुलाए और पुनः परीक्षण करे, यदि उनका साक्ष्य न्यायालय को वाद के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए आवश्यक प्रतीत हो; कि यह धारा अत्यंत व्यापक

परिधि की है और यदि महत्वपूर्ण साक्षियों का परीक्षण न करने के कारण कोई उपेक्षा, शैथिल्य या भूल हुई हो, तो किसी भी प्रक्रम पर ऐसे साक्षियों का परीक्षण करके न्यायसंगत विनिश्चय प्रदान करने का न्यायालय का कार्य किसी भी प्रकार से बाधित नहीं होता। [375-ग-घ-च]

राजेंद्र प्रसाद बनाम नारकोटिक सेल, **[1999] 6 एससीसी 110, पर अवलंबन किया गया।**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 1218/2001।

पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक विविध सं. 16453/2000 में दिनांक 3.7.2000 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ता की ओर से सुश्री कामाक्षी एस. मेहलवाल।

उत्तरदाताओं की ओर से बी.बी. सिंह और शिव पूजन सिंह।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा सुनाया गया:

न्यायामूर्ति शाह अनुमति प्रदान की गई।

यह अपील पटना उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक विविध वाद सं. 16453/2000 में दिनांक 03.7.2000 को पारित उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध दाखिल की गई है, जिसके द्वारा अपर सत्र न्यायाधीश, गया द्वारा दिनांक 2.6.2000 को पारित आदेश की पुष्टि की गई थी।

अपीलकर्ता का यह कथन है कि उसकी माता को आरोपियों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव बनाकर, जो घातक हथियारों से लैस थे, मृत्यु के घाट उतारा गया। दिनांक 9.10.1991 को बोधगया थाने में 15 नामजद आरोपियों और 25 से 30 अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गई। दिनांक 27.8.1993 को वाद को सत्र विचारण सं. 24/1993 में 5 वें अपर सत्र

न्यायाधीश, गया द्वारा विचारण के लिए लिया गया। दिनांक 27.8.1993 को आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध भा.दं.सं. की धाराओं 148, 149, 323, 449 एवं 302 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए।

दो या तीन औपचारिक साक्षियों का परीक्षण करने के पश्चात, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने इस आधार पर अभियोजन का साक्ष्य बंद कर दिया कि अपर लोक अभियोजक ने स्थगन के लिए अथवा अन्य साक्षियों के परीक्षण के लिए कोई मौखिक या लिखित प्रार्थना नहीं की। अभियोजन साक्ष्य बंद घोषित कर दिया गया और मामला आरोपी का कथन अभिलिखित करने के लिए नियत कर दिया गया।

तत्पश्चात अभियोजन ने 5 वें अपर सत्र न्यायाधीश के न्यायालय से वाद स्थानांतरण के लिए आवेदन दाखिल किया। तथापि, 5 वें अपर सत्र न्यायाधीश सेवानिवृत्त हो गए और वाद अपर सत्र न्यायाधीश-2, गया को स्थानांतरित कर दिया गया, जिन्होंने अपने दिनांक 20.9.1995 के आदेश द्वारा 5 वें अपर सत्र न्यायाधीश, गया के दिनांक 3.9.1994 के उस आदेश को, जिसके द्वारा अभियोजन साक्ष्य बंद करने का निर्देश दिया गया था, वापस लेना उचित समझा। उन्होंने अपर लोक अभियोजक को सुनवाई की अगली तारीख पर साक्षियों को उपस्थित कराने का भी निर्देश दिया।

उस आदेश को आरोपी द्वारा पटना उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक पुनरीक्षण सं. 530/1995 दाखिल कर चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 1.2.2000 के आदेश द्वारा इस आधार पर पुनरीक्षण आवेदन स्वीकार कर लिया कि "यह सुस्थापित है कि आपराधिक न्यायालय अपने पूर्व आदेश को वापस नहीं ले सकता।"

पुनः दिनांक 12.5.2000 को राज्य ने साक्षियों के परीक्षण के लिए अपर सत्र न्यायाधीश, गया के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के अंतर्गत आवेदन दाखिल किया। वह आवेदन दिनांक 2.6.2000 के आदेश द्वारा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया

गया कि पुनरीक्षण आवेदन में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के मद्देनज़र राज्य के आवेदन का कोई औचित्य नहीं है। उस आवेदन की सुनवाई के समय अपर लोक अभियोजक अनुपस्थित रहे। तत्पश्चात अपीलकर्ता-सूचक ने उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक विविध वाद सं. 16453/2000 दाखिल किया। वह आवेदन भी आक्षेपित निर्णय द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करना उच्च न्यायालय के लिए उचित नहीं था। उस आदेश को यह अपील दाखिल कर चुनौती दी गई है, जिसमें यह तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 1.2.2000 को पारित पूर्व आदेश अपने स्पष्ट रूप में अवैध, त्रुटिपूर्ण और दं.प्र.सं. के उपबंधों के विरुद्ध है।

जिला गया के बोधगया थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा दाखिल प्रतिवाद में यह इंगित किया गया है कि संबंधित अन्वेषण अधिकारी वर्तमान में न तो बोधगया थाने में और न ही जिला गया के अंतर्गत अन्य किसी थाने में पदस्थ हैं। उन्होंने विशेष रूप से कहा, "यह प्रस्तुत किया जाता है कि उन्हें कभी भी किसी न्यायालय अथवा अपर लोक अभियोजक सहित किसी अन्य अभिकरण द्वारा सूचना या समन तामील नहीं किया गया और न ही किसी प्रकार से यह संसूचित किया गया कि साक्षी को विचारण न्यायालय में उपस्थित कराएं।" उन्होंने यह भी कहा कि बोधगया थाना, गया के कार्यालय में समस्त सुसंगत अभिलेखों और पंजिकाओं का अवलोकन करने के पश्चात उन्हें संदर्भित वाद से संबंधित अपने कार्यालय को प्राप्त कोई समन अथवा किसी प्रकार की सूचना नहीं मिली। कंडिका सं. 9 में उन्होंने स्पष्ट किया कि अन्वेषण के पश्चात यह पाया गया कि साक्षी सं. 1 से 3 के विरुद्ध व्यवहार न्यायालय, गया के नाज़िर के माध्यम से समन जारी किए गए थे, किंतु आश्चर्यजनक रूप से वे समन कभी भी बोधगया थाने को नहीं भेजे गए। उनका यह भी कथन है कि यदि अवसर दिया जाए तो आरोप-पत्र में नामित साक्षियों को सूचना अथवा समन जारी करके न्यायालय के समक्ष उपस्थित कराया जा सकता है और वे उचित समय के भीतर संबंधित न्यायालय के समक्ष साक्षियों को उपस्थित कराने का भरसक प्रयास करेंगे।

हमारे विचार में, हत्या के विचारण में यह घृणित और विकर्षणकारी बात है कि थाने के भारसाधक अधिकारी को सूचित किए बिना, न्यायालय द्वारा और अपर लोक अभियोजक द्वारा कार्यवाहियाँ आगे बढ़ाई गईं और इस प्रकार उसे निपटाने का प्रयास किया गया, मानो अभियोजन ने कोई साक्ष्य ही नहीं दिया हो। उपर्युक्त तथ्यों से ऐसा प्रतीत होता है कि आरोपी अनुचित साधनों द्वारा अभियोजन को विफल करना चाहता है और ऐसा प्रतीत होता है कि किसी न किसी रूप में अपर सत्र न्यायाधीश के साथ-साथ अपर लोक अभियोजक ने भी अपने कर्तव्यों के निर्वहन में कोई रुचि नहीं दिखाई। यदि अन्वेषण अधिकारी वाद के विचारण के समय उपस्थित रहने में असफल रहता है, तो सत्र न्यायाधीश का यह कर्तव्य था कि वह उसे समन जारी करता। विचारण के समय अन्वेषण अधिकारी की उपस्थिति अनिवार्य है। यह उसका कर्तव्य है कि वह साक्षियों को उपस्थित रखे। यदि किसी साक्षी की उपस्थिति में कोई चूक हो, तो न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह जमानती अथवा गैर-जमानती वारंट जारी करने सहित यथास्थिति उचित कार्रवाई करे। यह भली-भाँति समझ लिया जाना चाहिए कि ऐसे तरीकों से अभियोजन को विफल नहीं किया जा सकता और अपराध के पीड़ितों को असहाय अवस्था में नहीं छोड़ा जा सकता।

उत्तरदाता-आरोपी के विद्वान अधिवक्ता ने तथापि यह तर्क दिया कि इस वाद में दं.प्र.सं. की धारा 311 का संदर्भ देने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि उच्च न्यायालय के दिनांक 1.2.2000 के पूर्व आदेश द्वारा अपर सत्र न्यायाधीश के दिनांक 20.9.1995 के उस आदेश को अपास्त कर दिया गया था, जिसके द्वारा दिनांक 3.9.1994 के उस आदेश को वापस लिया गया था जिससे अभियोजन साक्ष्य बंद घोषित किया गया था। यह तर्क निःसार है। धारा 311 न्यायालय को यह अधिकार प्रदान करती है कि वह ऐसे महत्वपूर्ण साक्षियों को समन करे जिन्हें साक्षी के रूप में नहीं बुलाया गया था, तथा उनका परीक्षण करे अथवा उन्हें वापस बुलाए और पुनः परीक्षण करे, यदि उनका साक्ष्य न्यायालय को वाद के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए आवश्यक प्रतीत हो। यह इस प्रकार पठित है:

"311. महत्वपूर्ण साक्षी को समन करने अथवा उपस्थित व्यक्ति का परीक्षण करने की शक्ति — कोई भी न्यायालय इस संहिता के अंतर्गत किसी भी जांच, विचारण अथवा अन्य कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम पर किसी व्यक्ति को साक्षी के रूप में समन कर सकेगा, अथवा उपस्थित किसी व्यक्ति का, चाहे वह साक्षी के रूप में समन न किया गया हो, परीक्षण कर सकेगा, अथवा पहले से परीक्षित किसी व्यक्ति को वापस बुला सकेगा और उसका पुनः परीक्षण कर सकेगा; और न्यायालय ऐसे किसी भी व्यक्ति को समन करेगा और उसका परीक्षण करेगा अथवा उसे वापस बुलाएगा और पुनः परीक्षण करेगा यदि उसका साक्ष्य उसे वाद के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए आवश्यक प्रतीत हो।"

उक्त धारा का सरल पठन यह प्रकट करता है कि यह धारा अत्यंत व्यापक परिधि की है और यदि महत्वपूर्ण साक्षियों का परीक्षण न करने के कारण कोई उपेक्षा, शैथिल्य या भूल हुई हो, तो किसी भी प्रक्रम पर ऐसे साक्षियों का परीक्षण करके न्यायसंगत विनिश्चय प्रदान करने का न्यायालय का कार्य किसी भी प्रकार से बाधित नहीं होता। इस न्यायालय ने *राजेंद्र प्रसाद बनाम नार्कोटिक सेल,* [1999] 6 एस.सी.सी. 110 में अभिनिर्धारित किया, "आखिरकार, आपराधिक न्यायालय का कार्य आपराधिक न्याय का प्रशासन करना है, न कि पक्षकारों द्वारा की गई त्रुटियों की गणना करना अथवा यह ज्ञात करके घोषित करना कि पक्षकारों में से किसने बेहतर प्रदर्शन किया।"

इस विचार से, अपील स्वीकार की जाती है। अपर सत्र न्यायाधीश, गया के दिनांक 2.6.2000 के आदेश की पुष्टि करने वाला उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। राज्य द्वारा दं.प्र.सं. की धारा 311 के अंतर्गत दाखिल आवेदन स्वीकार किया जाता है। सत्र न्यायाधीश को निर्देश दिया जाता है कि वे दं.प्र.सं. की धारा 309 का कठोरता से पालन करते हुए तथा बोधगया थाने के भारसाधक अधिकारी को न्यायालय में साक्षियों के

परीक्षण हेतु उन्हें उपस्थित रखने का निर्देश देते हुए, दिन-प्रतिदिन के आधार पर मामले में आगे कार्यवाही करें।

एस.के.एस. अपील स्वीकृत।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।